फटा पोस्टर निकला राहुल लेकिन बहुत देर से

दिल्ली (मज़दूर मोर्चा ब्यूरो) कांग्रेस का पोस्टर तो बरसों पहले ही फट चुका था लेकिन उसमें से राहुल गांधी अब जाकर निकला है। शायद सलाह देने वाला कोई सही सलाहकार उपलब्ध नहीं हो पाया था।

'तु मेरी कमर खुजा मैं तेरी खुजाऊंगा' की तर्ज पर कांग्रेस की मनमोहन सरकार ने सुप्रीम कोर्ट के उस आदेश को काटने के लिये एक अध्यादेश राष्ट्रपति की मंजूरी के लिये भेजा था जिसके द्वारा लालू यादव तथा राशिद मसूद जैसे अपराधियों को राजनीति में बनाये रखा जा सके। शायद ही कोई राजनीतिक दल ऐसा हो जिसमें एक से बढ़ कर एक छंटे हुए अपराधी न हों। इस लिये यह अध्यादेश सभी दलों की मौलिक आवश्यकता बन गया था। इसी के मद्दे-नज़र सर्वदलीय बैठक में कम्युनिस्ट व जनता दल यूनाइटिड को छोड़कर बाकी सब इसके समर्थन में थे।

मनमोहन सिंह मन्त्रिमंडल द्वारा तैयार एवं पारित उक्त अध्यादेश जब राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी के पास हस्ताक्षर हेतु पहुंचा तो उन्होंने इस पर घुग्गी मारने के बजाय कानून मंत्री कपिल सिब्बल (अध्यादेश के मुख्य जनक) तथा गृह मन्त्री सुशील कुमार शिंदे को बुला भेजा। उनके इस व्यवहार से राजनीतिक जगत में हवा यह फ़ैल गयी कि राष्ट्रपति इस पर हस्ताक्षर करने वाले नहीं हैं। माहौल को बदला देख कर भाजपा भी झट से पाला पलट कर इसके विरोध में आ खड़ी हुई। उधर इक्का-दुक्का कांग्रेसी भी विरोध में मुंह खोलने लगे थे। जब यह तय हो गया कि अध्यादेश पास होने नहीं जा रहा है तो सरकार की इज्जत व शालीनता का तकाज़ा तो यह था कि वह खुद इसे वापस लेकर रद्द कर देती। लेकिन इससे राहुल गांधी, जिसे मोदी के मुकाबले मीडिया कोई भाव नहीं दे रहा, को क्या हासिल होता? इसलिये तुर्त-फुर्त राहुल गांधी को डायलाग रटा कर 'एंग्री यंगमैन' की भूमिका में प्रेस के सामने उतारा गया। मज़े की बात तो यह है कि राहुल प्रेस क्लब में उसी वक्त पहुंचे जब वहां कांग्रेस महासचिव एवं मीडिया प्रभारी अजय माकन पत्रकारों को अध्यादेश के पक्ष में तर्क दे रहे थे। लेकिन इसी बीच राहुल ने आकर कहा कि यह अध्यादेश बकवास है, इसे फ़ाड़ कर कूड़ेदान में फ़ेंक देना चाहिये। उनकी पार्टी भ्रष्टाचारियों व अपराधियों को संरक्षण नहीं दे सकती।

कमाल की बात तो यह हुई कि कुछ क्षण पूर्व जो अजय माकन अध्यादेश को सही ठहराने पर पूरा ज़ोर लगा रहे थे, तुरन्त पल्टी मार गये तथा राहुल की हां में हां मिलाते हुए अध्यादेश को बकवास बताने में जुट गये। यानी कि अपनी घर की कोई अक्ल नहीं, कल का तोता राहुल बाबा जो कह दे वही सत्यवचन है। यही हाल मनीष तिवारी का था। बेशर्मी और धूर्तता में अपना कोई सानी नहीं रखने वाले कपिल सिब्बल को तो इतनी शर्म आई कि वे पत्रकारों के सामने ठहर ही नहीं पाये और लपक कर अपनी कार में धंस गये।

इस प्रकरण में सबसे अधिक फ़जीहत किसी की हुई है तो वह है मनमोहन सिंह जो इस वक्त अमेरिका एवं संयुक्त राष्ट्र संघ में भारत सरकार का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। 'युवराज' के हाथों इस तरह फ़जीहत होने पर, यदि उनमें ज़रा भी ग़ैरत होती तो वहीं से इस्तीफ़ा फ़ेंक कर मारते। सवाल तो सारा ग़ैरत का ही है, यदि वही होती तो कब के निकल लिये होते इस नेहरू-गांधी के राजदरबार से। जो भी हो तमाम राजनीतिक दलों द्वारा चलाये जा रहे इस दलगत भाइचारे की हवा तो निकल ही गयी है, वे आज चौराहे पर नंगे खड़े प्रतीत होते हैं। इससे आम जनता में अच्छी-खासी प्रसन्नता की लहर है।

गैर-मान्यता-प्राप्त स्कूलों की सीलिंग

फ़रीदाबाद (म.मो.) शिक्षा का पूरी तरह बेड़ा ग़र्क करने में जुटी सरकार अब ग़ैर-मान्यता-प्राप्त स्कूलों को सील करने का अभियान पूरे ज़ोर से चला रही है। इसका सबसे बड़ा लाभ उन अधिकारियों को होने जा रहा है जो मान्यता प्रदान करने के एवज में मोटी रिश्वत डकारते हैं।

सरकार ने शिक्षा के स्तर तथा विद्यार्थियों की सुविधा को ध्यान में रखते हुए निजी स्कूलों को मान्यता प्रदान करने के कुछ नियम बनाये हैं जैसे स्कूल परिसर का रकबा कितना होगा, कमरों का आकार प्रकार क्या होगा, पुस्तकालय तथा प्रयोगशालायें कैसी होंगी, शिक्षकों का स्तर क्या होगा आदि-आदि। लेकिन दुर्भाग्य की बात यह है कि अधिकांश मान्यता-प्राप्त स्कूल उक्त निर्धारित मानदंडों पर खड़े तो क्या उतरेंगे, आस-पास भी नहीं हैं। पिछले दिनों यहां ज़िला शिक्षाधिकारी रह चुकी रेखा धारीवाल भी ऐसी ही एक नकली मान्यता प्राप्त स्कूल द्वारा दिये गये अनुभव प्रमाण पत्र के आधार पर सरकारी नौकरी में आई थीं।

वस्तु-स्थिति यह है कि अनेकों गैर-मान्यता-प्राप्त स्कूल ऐसे हैं जो मान्यता-प्राप्त स्कूलों से बेहतर स्थिति में हैं। उनकी समस्या केवल इतनी भर रही कि वे मान्यता देनेवाले अधिकारियों से अभी सांठ-गांठ नहीं कर पाये थे। अब सरकारी डंडा चलने के बाद दुगने दाम देकर देर-सबेर मान्यता प्राप्त कर लेंगे। इन पर डंडा चलाने से पहले सरकार को उन स्कूलों की भी जांच कर लेनी चाहिये थी जिन्होंने मान्यता के लायक न होने के बावजूद मान्यता प्राप्त कर रखी है तथा उन अधिकारियों को भी ठिकाने लगाना चाहिये था जिन्होंने मान्यता बेची हैं। वास्तव में यदि सरकार अपने दायित्व को सही ढंग से निभाते हुए अपने स्कूलों को ठीक से चला लेती तो कोई भी इन निजी शिक्षा की दुकानों में जाकर राज़ी नहीं है। आज हालात ऐसी बना दिये हैं सरकार ने कि न तो खुद बच्चों को पढ़ा रही है न दूसरों को पढ़ाने दे रही है।

डेंगू-मलेरिया से हो रही मौतें: सरकार को याद आई फॉगिंग

फ़रीदाबाद (म.मो.) दिल्ली समेत पूरे एन सी आर में डेंगू एवं मलेरिया के मरीजों की संख्या तेज़ी से बढती जा रही है। तमाम सरकारी व प्राइवेट अस्पतालों में 'हाउस-फुल' चल रहे हैं। इलाज के अभाव में अनेकों मरीज काल का ग्रास बन चुके हैं। सरकारों की बयानबाज़ी व लफ़्फाजी जारी है।

महामारी से बचाव के नाम पर सरकार मच्छर-मार फ़ॉगिंग कराने का दावा कर रही है। फ़रीदाबाद में तो वह भी नहीं हो पा रहा। नगर निगम वाले कहते हैं कि उन्होंने 5 लाख रुपये मलेरिया विभाग को दे दिये हैं जो अभी तक खर्च नहीं हुए हैं। मलेरिया वाले कहते हैं कि पैसा देर से मिला है जिससे वे आवश्यक साज़ो-समान व दवा आदि की खरीदारी कर रहे हैं। जब तक यह खरीदारी पूरी होगी तब तक उसकी आवश्यकता ही समाप्त हो जायेगी। सारा सामान या तो कूड़ेदान में या वापस बाज़ार में लौटाकर पैसा डकार लिया जायेगा।

दरअसल शासक वर्ग की प्राथमिकता में आम आदमी की सेहत व जान कहीं आती ही नहीं। जो कुछ भी इस पर सरकार करती है वह केवल दिखावे और जनता को भ्रमित करने के लिये किया जाता है। यदि सरकार की नीयत सही हो तो फ़ॉगिंग का पाखंड करने की अपेक्षा मच्छरों को पैदा होने से ही रोका जा सकता है। यह सरल भी है और सस्ता भी। इससे प्रदूषण भी नहीं फ़ैलता। फ़ॉगिंग द्वारा तमाम मच्छरों को क्या एक चौथाई को मारना भी संभव नहीं है। जबकि इससे पूरा वातावरण जहरीली गैस से प्रदूषित हो जाता है।

दूसरी ओर मच्छरों के पैदा होने वाले स्थानों को चिन्हित करना, उन्हें समाप्त करना कहीं ज़्यादा सरल है। यदि मच्छर पैदा करने वाले खड़े पानी को समाप्त नहीं किया जा सकता तो वहां पर समय से दवाई डालना कहीं अधिक सस्ता, सरल और कारगर होता है। यह काम पहले मलेरिया विभाग करता रहा है जो अब पूर्णतया बंद करके फ़ॅगिंग का धंधा शुरू कर दिया गया। दरअसल सस्ते व सरल काम में लूट का माल कम हाथ लगता है। इस लिये मंहगा व दिखावे वाला काम शासकों के लिये ज़्यादा लाभप्रद है। जनता जाय भाड़ में।

किसकी नाकामी से आतंकी, सुरक्षाकर्मियों को कैम्प में मार गये

जम्मू के सांभा क्षेत्र में 26 सितम्बर को प्रात: करीब 5 बजे 3 आतंकियों ने हीरापुर थाने के 6 पुलिसकर्मियों, सेना के 3, जिनमें एक ले. कर्नल भी शामिल है तथा एक ट्रक क्लीनर को मार कर खुद भी सेना की गोलियों का शिकार हो गये।

इस वारदात को लेकर हल्ला यह मचाया जा रहा है कि पाकिस्तान ने इसे अंजाम दिया। बहस इस बात पर हो रही है कि प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह पाक प्रधानमंत्री नवाज शरीफ़ से वार्ता करें या न करें। इसमें कोई दो राय नहीं कि भारत की तरह पाकिस्तान में भी ऐसे कट्टरपंथी मौजूद हैं जो नहीं चाहते कि दोनों देशों के बीच से नफ़रत की दीवार हटा कर रिश्ते बेहतर किये जायें। भारत की अपेक्षा पाकिस्तान में इस तरह के गुट काफ़ी मजबूत एवं प्रभावशाली हैं। उनकी ताकत का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि वे बेनज़ीर भुट्टो जैसी नेता का सरेआम कत्ल कर सकते हैं, फ़ौज के जनरलों तक को गोलियों से भून सकते हैं। यह समझने में कोई दिक्कत नहीं होनी चाहिये कि ये गुट आज पाक सरकार एवं फ़ौज के भी काबू से बाहर हैं। इसमे भी कोई दो राय नहीं कि इस तरह की वारदातें उस समय जरूर की जाती हैं जब दोनों देशों के शीर्ष नेता वार्ता करने के नज़दीक हों। ज़ाहिर है इसके पीछे उनका मकसद वार्ता पर विपरीत प्रभाव डालना अथवा उसको रोकना ही होता है। लेकिन बुद्धिमता तो इसी में है कि वार्तालाप जारी रहें। वार्ता हो या न हो इस पर बहस करने की बजाय या वारदात पर पाकिस्तान को दोषी बताने की बजाय भारत सरकार एवं सेना को अपनी खामियों पर विचार कर उन्हें दूर करना चाहिये। दुश्मन तो फ़िर वारदात करेगा ही, सवाल यह है कि भारत सरकार क्या कर रही है, उससे निपटने के लिये? सेना का कैम्प इतनी आसानी से कैसे आतंकवादी चपेट में आ जाता है?

गौरतलब है कि 3 आतंकवादी अति 'सुरक्षित एवं संरक्षित' सरहद पार से रात के अंधेरे में आते हैं और सोते हुए या राह चलते नागरिकों को नहीं बल्कि उन 9 पुलिस व सेना के लोग़ों को मार देते हैं जिन पर आमजनता की सुरक्षा की ज़िम्मेदारी है। यह भी गौरतलब है कि थाने पर हमले के करीब 50 मिनट बाद सेना के कैम्प पर हमला होता है। कितनी लचर व्यवस्था रही होगी वहां, समझना कठिन नहीं, कि इतने समय में भी सेना सतर्क नहीं हो पायी पायी पाइपा कठिन नही, कि इतने समय में भी सेना सतर्क क्यों नहीं हो पायी।

यह वारदात इस ओर भी इंगित करती है कि थाने व सेना-कैम्प में संतरी व्यवस्था कितनी कमज़ोर रही होगी। यदि संतरी व्यवस्था चुस्त-दुरुस्त होती तो एक भी सुरक्षाकर्मी नहीं मारा जा सकता था। जब सारा देश जानता है कि पाकिस्तान इस तरह की वारदातें करता रहता है तो फ़िर बार्डर के वहां थानों और सेना-कैम्पों की सुरक्षा व्यवस्था में ढिलाई क्यों बरती गयी?

संदर्भवश पाठक यह भी जान लें कि सेना के जिस कैम्प पर हमला हुआ था वह 16 कवेलरी का था। सेना की यह वही यूनिट है जो कुछ माह पूर्व लेह-लद्दाख में तैनात थी और इसके जवानों व अफ़सरों में जमकर आपसी सिर-फुटैव्ल हुई थी। इसमें 100 के करीब जवानों व अफ़सरों को दोषी पाया गया था। जिस यूनिट की अपनी खुद की यह हालत हो तो दुश्मन तो कभी मौका चूकेगा ही नहीं।

कुल मिलाकर समझने वाली बात यह है कि वारदात चाहे पाकिस्तानी करें या आतंकवादी, उससे निपटने को हमारी तैयारी क्या है?

नॉर ब्रीम्स में ठेका मज़दूरों का आंदोलन

मज़दूरों ने आंशिक रूप से जीत हासिल की, बहुराष्ट्रीय कम्पनी में गैरकानूनी ठेकेदारी

फ़रीदाबाद (म.मो.) नॉर ब्रीम्स एक बहुराष्ट्रीय कंपनी है जो कि रेल में इस्तेमाल होने वाले ब्रेक, शॉकर वाइपर, डिस्क ब्रेक...वगैरह बनाती है। भारत में यह कम्पनी नॉर ब्रीम्स इंडिया प्राइबेट लिमिटेड नाम से है। भारत में इसका एक प्लाण्ट फ़रीदाबाद में और दूसरा पुणे में है। फ़रीदाबाद स्थित प्लाण्ट को अभी हाल ही में लगभग पूरा का पूरा भगोला (पलवल)में शिफ्ट कर दिया गया है।

नॉर ब्रीम्स के फ़रीदाबाद स्थित प्लाण्ट, जिसे ज़्यादा मुनाफ़ा कमाने की गरज से भगोला इंडस्ट्रियल एरिया में शिफ्ट किया जा चुका है, में 2 ठेकेदार कम्पनियों के माध्यम से लगभग 200 श्रमिक नियोजित हैं। 35 श्रमिक स्थाई हैं। स्थाई श्रमिकों का वेतन 25,000 रुपये से लेकर 40,000 रुपये तक है जबकि ठेका श्रमिकों में से ज़्यादातर को हेल्पर का न्यूनतम हरियाणा ग्रेड ही दिया जाता है। इनमें से अधिकांश कुशल, आईटीआई पास आपरेटर हैं। इस तरह यह बहुराष्ट्रीय कम्पनी स्थाई प्रकृति के काम में गैरकानूनी तरीके से ठेका प्रथा संचालित कर अकूत मुनाफ़ा कमा रही है नॉर ब्रीम्स प्रबंधक ठेका श्रमिकों का बोनस भी हड़प जाता है।

कम्पनी के फ़रीदाबाद से भगोला शिफ्ट होने पर शुरूआत में सभी श्रमिकों को आने-जाने का किराया (कनवेन्स) 300 रुपये के प्रतिदिन के हिसाब से दिया गया, लेकिन शिफ्टिंग पूरी हो जाने एवं काम के सामान्य गति में आ जाने पर प्रबंधन ने स्थायी श्रमिकों एवं स्टाफ़ के लिए तो बस लगा दी जबकि ठेका श्रमिकों का कनवेन्स बंद करा दिया। इससे आक्रोशित श्रमिक काम बंद कर फ्लोर पर बैठ गये। श्रमिकों का तर्क था कि उन्हें फ़रीदाबाद से भगोला आकर ड्यूटी करने में 3 घण्टा अतिरिक्त व्यय करना पड़ता है इसलिए उनका वेतन बढ़ाकर 10,000 रुपये प्रतिमाह किया जाए। प्रबंधन ने श्रमिकों की इस एकदम जायज मांग को मानने से इंकार कर दिया। प्रबंधन ने श्रमिकों को काम शुरू करने के लिए समझाया और धमकाया लेकिन श्रमिक काम छोड़कर बैठे रहे। कई घण्टों की रस्साकशी के बाद अंतत: श्रमिकों से प्रबंधन के मध्य समझौता हुआ कि उन के लिए भी जल्द ही बस लगा दी जायेगी और तब तक पहले की तरह कनवेन्स मिलता रहेगा। स्थायी मज़दूरों की यूनियन ने ठेका मज़दूरों का साथ दिया और बातचीत को अंजाम तक पहुंचाने में मध्यस्थता की। लेकिन छुट्टी होने पर प्रबंधन के इशारे पर ठेकेदार ने श्रमिकों को उनके किए पर डांट पिलाई और कहा कि कोई कन्वेन्स नहीं दिया जायेगा। अगले दिन 9 अगस्त के दिन जब श्रमिक ड्यूटी पहुंचे तो उन्हें गेट पर रोक दिया गया। ठेकेदार हथियारबंद गुंडों के साथ वहां जमा था। श्रमिकों पर ठेकेदार द्वारा अपने मनमाफिक समझौता करने का दबाव डाला जाने लगा। अंतत: दोबारा समझौता हुआ कि जो श्रमिक बस से आना चाहते हैं उनके लिये बस लगायी जायेगी और बाकी को 1000 रुपये प्रतिमाह कन्वेन्स मिलेगा। यह समझौता दबाव में हुआ। इस बार स्थायी श्रमिक की यूनियन भी ठेका श्रमिकों के लिये कुछ नहीं कर सकी। हालांकि गेट पर हथियार बंद गुण्डों की मौजूदगी ने यूनियन पदाधिकारियों को भी पसोपेश में डाल दिया। कंपनी गेट पर हथियारबंद गुण्डे प्रबंधन के इशारे पर ही आये थे। इस तरह साल में 2-3 भव्य पार्टियां आयोजित करने वाली इस बहुराष्ट्रीय कंपनी ने श्रमिकों के संगठित होते ही अपनी औकात दिखा दी। ठेका श्रमिकों ने इस संघर्ष में अपनी एकता के बल पर आंशिक तौर पर जीत हासिल की है। इस संघर्ष ने उन्हें एकता के सूत्र में बांधा है। इस एकता को और मजबूत करना होगा। ठेका श्रमिक और स्थायी श्रमिक के विभाजन से ऊपर उठकर यूनियन को सभी श्रमिकों को अपना सदस्य बनाना चाहिए। 35 स्थायी श्रमिक भी तभी तक सुरक्षित हैं जब तक कि 200 ठेका श्रमिक उनके साथ हैं। यूनियन को पूरी कम्पनी के सभी श्रमिकों को गोलबंद करते हुए कंपनी से गैरकानूनी ठेकेदारी को समाप्त करने की मांग करनी चाहिए। अन्यथा भविष्य में स्थायी श्रमिक भी हथियारों के साये में काम करने को बाध्य होंगे।